

गीता के समन्वयात्मक दृष्टिकोण का विवेचन

डॉ० राज्यश्री मिश्रा

असिस्टेंट प्रोफेसर संस्कृत,

महात्मा गांधी बालिका विद्यालय (पी.जी.) कालेज फिरोजाबाद

सार

श्रीमद्भगवद्गीता, भारतीय संस्कृति का एक अनुपम रत्न है। महाभारत के युद्धस्थल में भगवान श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन को दिया गया यह उपदेश, जीवन के गूढ़ रहस्यों, धर्म, कर्म, ज्ञान और भक्ति जैसे महत्वपूर्ण विषयों पर प्रकाश डालता है। गीता की सबसे महत्वपूर्ण विशेषताओं में से एक है इसका समन्वयात्मक दृष्टिकोण। यह किसी एक विशेष विचारधारा या मार्ग पर बल न देकर, विभिन्न दार्शनिक प्रणालियों और आध्यात्मिक मार्गों के बीच समन्वय स्थापित करने का प्रयास करती है। इसी कारण, गीता सदियों से विभिन्न मतों और संप्रदायों के अनुयायियों के लिए प्रेरणा का स्रोत बनी हुई है। गीता का महत्व केवल सैद्धांतिक नहीं है; इसके व्यावहारिक अनुप्रयोग आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं जितने सदियों पहले थे। आधुनिक नेतृत्व और प्रबंधन के सिद्धांतों, जैसे कि परिवर्तनकारी नेतृत्व, नैतिक नेतृत्व और सहभागी प्रबंधन, में गीता के कई मूलभूत सिद्धांतों की प्रतिध्वनि सुनाई देती है। एक नेता जो कर्तव्यनिष्ठ है, फल की आसक्ति के बिना कर्म करता है, स्थिर बुद्धि वाला है, आत्म-जागरूक है और प्रभावी ढंग से संवाद करता है, वह किसी भी संगठन को सफलता की ओर ले जाने में सक्षम होगा। श्रीमद्भगवद्गीता नेतृत्व और प्रबंधन के लिए एक अद्वितीय और कालातीत मार्गदर्शिका प्रदान करती है। यह कर्तव्य, कर्मयोग, स्थितप्रज्ञता, आत्म-जागरूकता और प्रभावी संचार जैसे महत्वपूर्ण सिद्धांतों पर जोर देती है। गीता के गहन ज्ञान को आत्मसात करके, व्यक्ति न केवल अपने नेतृत्व और प्रबंधन कौशल को बढ़ा सकते हैं, बल्कि एक अधिक उद्देश्यपूर्ण और सार्थक जीवन भी जी सकते हैं। यह प्राचीन ग्रंथ आज भी हमें यह याद दिलाता है कि सच्चा नेतृत्व शक्ति या अधिकार में नहीं, बल्कि चरित्र, करुणा और दूसरों को प्रेरित करने की क्षमता में निहित है।

मुख्य शब्द

श्रीमद्भगवद्गीता, भारतीय, संस्कृति, ज्ञान

भूमिका

गीता का केंद्रीय विषय धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र में अर्जुन और उसके सारथी भगवान श्रीकृष्ण के बीच का संवाद है। युद्ध के मैदान में अपने ही बंधु-बंधवों को देखकर अर्जुन मोहग्रस्त हो जाता है और युद्ध करने से इनकार कर देता है। तब श्रीकृष्ण उसे कर्तव्य, कर्म, ज्ञान, भक्ति और योग के माध्यम से जीवन के गूढ़ रहस्यों का ज्ञान देते हैं। गीता का यह ज्ञान हमें व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में शांति और सद्भाव स्थापित करने की दिशा में मार्गदर्शन करता है।

विश्व में आज अशांति, संघर्ष और विद्वेष का वातावरण व्याप्त है। व्यक्तिगत स्तर से लेकर वैश्विक स्तर तक, मानव जाति अनेक समस्याओं से जूझ रही है। ऐसे समय में, भारतीय संस्कृति के महान ग्रंथ श्रीमद्भगवद्गीता का महत्व और भी बढ़ जाता है। गीता न केवल एक धार्मिक ग्रंथ है, बल्कि यह जीवन के हर पहलू पर प्रकाश डालने वाला एक अनुपम दर्शन है। यह शांति और सद्भाव की स्थापना में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

गीता हमें सिखाती है कि सच्ची शांति बाहरी परिस्थितियों पर निर्भर नहीं करती, बल्कि यह हमारे भीतर स्थित है। जब हम आसक्ति, कामना और अहंकार से मुक्त होते हैं, तभी हम आंतरिक शांति का अनुभव कर सकते हैं। गीता कर्मयोग का संदेश देती है, जिसका अर्थ है फल की इच्छा किए बिना कर्तव्य का पालन करना। जब हम अपने कर्मों को निष्काम भाव से करते हैं, तो हम चिंता और तनाव से मुक्त रहते हैं, जो शांति के लिए आवश्यक है।

गीता हमें ध्यान और योग के महत्व को भी बताती है। नियमित अभ्यास से हम अपने मन को नियंत्रित कर सकते हैं और नकारात्मक विचारों को दूर कर सकते हैं। स्थिर मन ही शांति का आधार है। गीता का ज्ञान हमें यह समझने में मदद करता है कि जीवन क्षणभंगुर है और भौतिक वस्तुओं में स्थायी सुख नहीं है। इस ज्ञान से वैराग्य उत्पन्न होता है, जो हमें अनावश्यक इच्छाओं से मुक्त करता है और शांति की ओर ले जाता है।

गीता केवल व्यक्तिगत शांति का ही मार्ग नहीं दिखाती, बल्कि यह सामाजिक सद्भाव की स्थापना के लिए भी महत्वपूर्ण संदेश देती है। गीता सभी प्राणियों में एक ही आत्मा का दर्शन कराती है। जब हम यह जान लेते हैं कि सभी जीव ईश्वर के अंश हैं, तो हमारे मन में किसी के प्रति द्वेष या भेदभाव की भावना नहीं रहती। यह समता का भाव सामाजिक सद्भाव की नींव रखता है।

गीता हमें अपने-अपने वर्ण और आश्रम के अनुसार कर्तव्य पालन करने का उपदेश देती है। जब प्रत्येक व्यक्ति अपने निर्धारित कर्तव्यों का ईमानदारी से पालन करता है, तो समाज में व्यवस्था और सामंजस्य बना रहता है। गीता यह भी सिखाती है कि हमें दूसरों के विचारों और भावनाओं का सम्मान करना चाहिए। सहनशीलता और क्षमा जैसे गुण सामाजिक संबंधों को मधुर बनाते हैं और संघर्षों को कम करते हैं।

गीता का ज्ञान हमें यह भी बताता है कि अहंकार और स्वार्थ सामाजिक अशांति के मुख्य कारण हैं। जब हम अपने व्यक्तिगत लाभ से ऊपर उठकर समाज के कल्याण के लिए कार्य करते हैं, तो सद्भाव की स्थापना होती है। गीता का 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का भाव, अर्थात् 'संपूर्ण विश्व एक परिवार है', वैश्विक स्तर पर शांति और सद्भाव स्थापित करने की प्रेरणा देता है।

भक्ति योग का अभ्यास करने से साधक को अनेक लाभ प्राप्त होते हैं। यह मन को शांति और स्थिरता प्रदान करता है, अहंकार को दूर करता है, सांसारिक आसक्तियों से मुक्ति दिलाता है और अंततः भगवान के दिव्य प्रेम का अनुभव कराता है। भक्ति योग के माध्यम से भक्त भगवान के साथ एक अटूट संबंध स्थापित करता है, जो उसे जीवन के हर क्षेत्र में मार्गदर्शन और शक्ति प्रदान करता है।

साहित्य की समीक्षा

भगवद्गीता में भक्ति योग मोक्ष प्राप्ति का एक अत्यंत महत्वपूर्ण और प्रभावशाली मार्ग है। यह प्रेम, श्रद्धा और समर्पण पर आधारित है और सभी के लिए सुलभ है। भक्ति योग के माध्यम से साधक न केवल सांसारिक दुखों से मुक्ति प्राप्त करता है, बल्कि भगवान के दिव्य प्रेम और आनंद का भी अनुभव करता है। यह एक ऐसा मार्ग है जो हृदय को शुद्ध करता है, मन को शांत करता है और आत्मा को परमात्मा से जोड़ता है। इसलिए, गीता में भक्ति योग को एक श्रेष्ठ और कल्याणकारी मार्ग के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। [1]

भगवद्गीता में कर्म योग का संदेश आज भी उतना ही प्रासंगिक है जितना हजारों वर्ष पहले था। आधुनिक जीवन में, जहां प्रतिस्पर्धा और भौतिक इच्छाएं हावी हैं, कर्म योग हमें संतुलन और संतोष प्राप्त करने का मार्ग दिखा सकता है। यह हमें सिखाता है कि कैसे हम अपने दैनिक कार्यों को भी एक आध्यात्मिक अभ्यास में बदल सकते हैं और जीवन को अधिक सार्थक और उद्देश्यपूर्ण बना सकते हैं। कर्म योग वास्तव में जीने की एक कला है, जो हमें कर्मों के बंधन से मुक्त होकर पूर्णता की ओर ले

जाती है। [2]

गीता में भक्ति योग को मोक्ष प्राप्ति के एक सरल, सुगम और सर्वोत्कृष्ट साधन के रूप में प्रस्तुत किया गया है। भक्ति का शाब्दिक अर्थ है प्रेम, श्रद्धा और समर्पण। भक्ति योग का तात्पर्य है भगवान के प्रति अनन्य प्रेम और पूर्ण समर्पण के माध्यम से उनसे जुड़ना और अंततः मोक्ष को प्राप्त करना। गीता के बारहवें अध्याय में विशेष रूप से भक्ति योग का विस्तार से वर्णन किया गया है, लेकिन इसके बीज अन्य अध्यायों में भी बिखरे हुए हैं। [3]

गीता का समन्वयात्मक दृष्टिकोण कई स्तरों पर दिखाई देता है। सबसे पहले, यह ज्ञान, कर्म और भक्ति के तीन प्रमुख मार्गों के बीच समन्वय स्थापित करती है। पारंपरिक रूप से, मोक्ष प्राप्ति के लिए इन तीन मार्गों को अलग-अलग माना जाता था। [4]

गीता के समन्वयात्मक दृष्टिकोण का विवेचन

ज्ञान मार्ग, जिसमें आत्म-ज्ञान और तत्वज्ञान के माध्यम से मुक्ति प्राप्त की जाती है; कर्म मार्ग, जिसमें निष्काम कर्म और कर्तव्य पालन के माध्यम से सिद्धि प्राप्त होती है; और भक्ति मार्ग, जिसमें ईश्वर के प्रति अनन्य प्रेम और समर्पण के द्वारा मोक्ष प्राप्त किया जाता है। गीता इन तीनों मार्गों को परस्पर विरोधी नहीं मानती, बल्कि उन्हें एक ही लक्ष्य तक पहुंचने के विभिन्न साधन के रूप में देखती है। श्रीकृष्ण अर्जुन को उपदेश देते हैं कि सच्चा ज्ञान कर्म से रहित नहीं हो सकता, और सच्ची भक्ति ज्ञान और कर्म के बिना अधूरी है। निष्काम कर्म, ज्ञान से प्रेरित होकर और भक्ति से परिपूर्ण होकर, साधक को परम लक्ष्य तक पहुंचा सकता है।

दूसरा महत्वपूर्ण समन्वय गीता में विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं के बीच दिखाई देता है। इसमें सांख्य दर्शन के द्वैतवाद (प्रकृति और पुरुष का भेद), योग दर्शन के अभ्यास और नियंत्रण के सिद्धांत, और वेदान्त दर्शन के अद्वैतवाद (ब्रह्म की एकता) के तत्वों का समावेश है। गीता किसी एक दर्शन को पूर्ण सत्य के रूप में प्रस्तुत नहीं करती, बल्कि विभिन्न दृष्टिकोणों की महत्ता को स्वीकार करते हुए, उन्हें एक व्यापक आध्यात्मिक ढांचे में एकीकृत करती है। यह बताती है कि विभिन्न दार्शनिक प्रणालियाँ सत्य के विभिन्न पहलुओं को समझने में सहायक हो सकती हैं, और अंततः सभी का लक्ष्य एक ही है - आत्मा का परमात्मा से मिलन।

तीसरा समन्वय गीता में लौकिक और आध्यात्मिक जीवन के बीच स्थापित किया गया है। यह सांसारिक

कर्तव्यों और जिम्मेदारियों से पलायन करने का उपदेश नहीं देती, बल्कि उन्हें धर्म और निष्ठा के साथ निभाने का आग्रह करती है। गीता का कर्मयोग का सिद्धांत इसी समन्वय का प्रतीक है। यह सिखाता है कि व्यक्ति अपने सांसारिक कर्मों को ईश्वर को समर्पित करते हुए और आसक्ति रहित होकर करते हुए भी आध्यात्मिक प्रगति कर सकता है। युद्ध जैसे कठिन कर्तव्य का पालन भी यदि धर्म और न्याय के लिए किया जाए, तो वह आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग बन सकता है।

इसके अतिरिक्त, गीता में विभिन्न सामाजिक वर्गों और वर्णों के कर्तव्यों का भी समन्वयकारी दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया है। यह किसी एक वर्ण को श्रेष्ठ या हीन नहीं मानती, बल्कि समाज के सुचारू संचालन के लिए सभी के विशिष्ट योगदान को महत्वपूर्ण मानती है। प्रत्येक व्यक्ति को अपने स्वभाव और क्षमता के अनुसार कर्म करने और अपने कर्तव्यों का पालन करने का उपदेश दिया जाता है।

निष्कर्ष

गीता का समन्वयात्मक दृष्टिकोण भारतीय दर्शन और संस्कृति की एक अनमोल धरोहर है। यह ज्ञान, कर्म, भक्ति, विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं, लौकिक और आध्यात्मिक जीवन, और सामाजिक कर्तव्यों के बीच एक सामंजस्यपूर्ण दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है। यही कारण है कि गीता न केवल एक धार्मिक ग्रंथ है, बल्कि एक जीवन दर्शन भी है जो आज भी मानव जाति को प्रेरणा और मार्गदर्शन प्रदान करता है। इसका समन्वयात्मक संदेश हमें सिखाता है कि सत्य बहुआयामी है और विभिन्न दृष्टिकोणों का सम्मान करते हुए ही हम जीवन के जटिल प्रश्नों को बेहतर ढंग से समझ सकते हैं और एक सार्थक जीवन जी सकते हैं।

संदर्भ

मधुद्विसदास "भगवद गीता का इतिहास",

फाउलर, जीनी डी। भगवद गीता: छात्रों के लिए एक पाठ और टिप्पणी। ससेक्स अकादमिक प्रेस,

उपाध्याय, काशीनाथ। प्रारंभिक बौद्ध धर्म और भगवद्गीता। मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन,

ह्यूम, रॉबर्ट ई. "हिंदू धर्म और युद्ध।" द अमेरिकन जर्नल ऑफ थियोलॉजी 20.1 : 31-44

उपाध्याय, प्रियांकर। "शांति और संघर्ष: भारतीय सोच पर विचार।" सामरिक विश्लेषण 33.1 : 71-

83

गुप्ता, बीना। "भगवद गीता कर्तव्य और पुण्य नैतिकता के रूप में: कुछ प्रतिबिंब।" जर्नल ऑफ



रिलिजियस एथिक्स 34.3 : 373-395

मजीठिया, रूपेन। "भगवद गीता का नैतिक समन्वय।" तुलनात्मक दर्शन 6.1 : 8.

मुनियापन, बालकृष्णन और बिस्वजीत सत्पथी। "भगवद्गीता से सीएसआर का 'धर्म' और कर्म।" जर्नल

ऑफ़ ह्यूमन वैल्यूज़ 19.2 : 173-187